**International Journal of Research in Hindi**
**www.hindijournal.in**
**ISSN: 2582-3493**
**Received: 04-07-2026, Accepted: 04-08-2026, Published: 19-08-2026**
**Volume 8, Issue 3, 2026, Page No. 30-32**

# धनानंद की प्रेम–व्यंजना

**डॉ०लक्ष्य सिंह चौधरी**
असिस्टेंट प्रोफेसर, नेहरू मेमोरियल शिव नारायण दास कॉलेज, बदायूँ, उत्तर प्रदेश, भारत
**DOI:** https://doi.org/10.66856/ijrh.2026.8.3.8058

**सारांश**
प्रस्तुत आलेख रीतिमुक्त काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि धनानंद की प्रेम–व्यंजना और उनकी अनुभूति की प्रामाणिकता का विश्लेषण करता है। धनानंद का काव्य 'प्रेम की पीर', आत्म–समर्पण और एकनिष्ठता पर आधारित है। उनका प्रेम–वर्णन किसी बाह्य आडंबर या अतिभावुकता से मुक्त होकर लौकिक प्रेम से आध्यात्मिक भक्ति (राधा–कृष्ण) की ओर अग्रसर होता है। आलेख में संयोग और विशेष रूप से वियोग श्रृंगार के विभिन्न पक्षों, मौन की व्यंजना, और विरोधी अभिव्यंजना का अध्ययन किया गया है। साथ ही, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी और डॉ. बच्चन सिंह जैसे आलोचकों के कथनों के माध्यम से धनानंद की विशुद्ध ब्रजभाषा और उनके काव्य की अनूठी विलक्षणता को रेखांकित किया गया है

**मूल शब्दः** रीतिमुक्त काव्यधारा, धनानंद, प्रेम की पीर, वियोग श्रृंगार, विरहानुभूति, लौकिक से आध्यात्मिकता, परिनिष्ठित ब्रजभाषा, एकनिष्ठ समर्पण, आत्मानुभूति, विरोधी अभिव्यंजना।

**शोध पत्र**
हिन्दी साहित्य के मध्ययुग में रीतिकाल की कविता की विशिष्ट पहचान है तथा इसी उत्तर मध्यकालीन कविता के प्रांगण में धनानंद रीतिमुक्त काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि के रूप में सम्मुख आते हैं। "धनानंद की कविता का मूल स्वर 'प्रेम की पीर' है"[1] धनानंद मध्ययुग में "प्रेम के उमंग भरे कवि" कहे जाते हैं। स्वयं धनानंद अपने आप को प्रेम भरे रास्ते पर चलाता हुआ देखते हैं जहाँ अपने आप को भुलाना होता है।

"ज्ञान धनआनंद अनोखो यह प्रेम पंथ,
भूले ते चलित, रहे सुधि के चकित हवै।"

रीतिमुक्त कवि के रूप में धनानंद की प्रेम–व्यंजना की अपनी कुछ निजी विशेषताएँ हैं। कारण उनकी अनुभूति की प्रामाणिकता झलकती है, इसलिए धनानंद प्रेम के सर्वथा अनूठे और विलग हैं। इनका प्रेम–वर्णन वैधानिकता, अतिभावुकता से मुक्त है तथा अपने साध्य के प्रति पूर्ण समर्पण भाव से भरा है।
साहित्यिक जीवन के पूर्वांश में कवि किसी 'सांसारिक प्रेम' में असफल होकर उसकी टीस से तड़पता है तथा करुण क्रन्दन करता है। साहित्यिक दृष्टि में प्रेम की पीड़ा का यही काव्य धनानंद की श्रृंगारिक कविताओं के मुकुट–माणिक बन गया है। उत्तरांश में कवि दार्शनिक बन गया है, इसलिए विरह की कटुता को गले से नीचे उतार उसे सार्वभौम रूप में देखने लगा।
धनानंद की कविताओं में प्रेम के दोनों ही पक्षों, 'संयोग' और 'वियोग' की अनुभूति का सहज प्रकाशन मिलता है। इसका सबसे बड़ा कारण कवि ने एकनिष्ठ भाव से प्रेम किया है। कवि का यही समर्पण भाव प्रेम को और गहरा बना देता है:

धनआनंद प्यारे सुजान सुनो,
जिहि बातिन दुख–सूल सहौ।
नहीं आवनि औधि न रावरी आस,
इते पर एक सी बाट चहैं।
यह देखि अकारन मेरी दशा,
कौन बूझै उतर कौन कहौ।
जिह नेकु विचारि के देहु बताय,
हरा पिय दूरि ते पाँच गाहौ।"[2]

समर्पण भाव की पीड़ा एक सीमा के बाद शब्दातीत हो जाती है, इसलिए इनकी कविता में एक प्रकार का 'मौन' है। परन्तु यह मौन हमें बहुत कुछ कह जाता है।
डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी के अनुसार—

"मौन एक दार्शनिक अनुभव है, दूसरी ओर काव्य–भाषण की दृष्टि से मितकथन। उनके काव्य का मौन जितना प्रीतिकर है, उतना ही विस्मयजनक।"[3]

धनानंद ने अपने काव्य में मुख्य रूप से नैसर्गिक तत्वों को ही स्थान दिया है तथा इनकी कविता भी इनकी आंतरिक अनुभूति का सहज प्रकाशन मात्र है। इसमें शारीरिक और मानसिक आकर्षण स्वतः आते जाते रहते हैं। डॉ. बच्चन सिंह के अनुसार—

"धनानंद के यहाँ शारीरिक और मानसिक आकर्षण का अपूर्व संयोग है, जिसमें एक ओर पायल की बिछिया है तो दूसरी ओर मन की शोर की अस्वस्थता है।"[4]

धनानंद के जीवन में प्रेम का स्थान ही बड़ा और ऊँचा है। इनका सारा जीवन और काव्य प्रेमरूपी रस से ओत–प्रोत है। इनका प्रेम सामान्य नहीं है, उदात्त है; परन्तु फिर भी वायवीय नहीं, शरीरी है। इस शरीरी प्रेम में प्रेम की दृष्टि प्रेमिका के शरीर को वैसे ही प्रसन्न और पुलकित कर देती है जैसे काम की ज्वाला अप्रतिम रूप में जगती रहती है:

"ऐसे रस बस क्यों न सोवै और स्वाद कहौ,
रोम–रोम जाग्योई रहत मीनकेत है।"[5]

प्रेम के मार्ग में इन्हें जो ठेस लगी उससे निराश नहीं हुए बल्कि और भी उत्साह से प्रेम के पथ पर आगे बढ़ते गए तथा प्रेम में 'लौकिक' से 'आध्यात्मिकता' की पराकाष्ठा तक पहुँचे।
"लौकिक दृष्टि से अत्यंत ऐन्द्रिय प्रेम–भाव से ईश्वरीय प्रेम तक पहुँचाने की जो साधना धनानंद ने अपने जीवन में की, वह उनके काव्य में प्रतिफलित है"[6]
इनका लौकिक प्रेम लोक की सीमाओं का कब अतिक्रमण कर लोकोत्तर तक पहुँच जाता है, यह पता नहीं चलता। प्रेम साधना

को यह साधना न कहकर आनंद के रूप में ग्रहण करते हैं। उसकी पीड़ा को सम्पूर्णता का दर्जा देते हैं। प्रेम के दोनों ही पक्षों—संयोग हो या दुख, दोनों की तीव्र और अत्यधिक घनीभूत अनुभूति वर्णनातीत हो जाती है। धनानंद की बात रूपी दुल्हन उर रूपी भवन में मौन का घूँघट डालकर बैठी रहती है। कोई काव्य मर्मज्ञ 'सुजान' ही इसे प्राप्त कर सकता है:

"उर भौन में मौन की घूँघट कै,
बैठी विराजत बात बानी।
मृदु मंजू पदार्थ भूषन सो सुलसै,
हुलसै रस–रूप धिनानंद मानी।।"[7]

**धनानंद जब–जब अपने प्रेमी प्रिय से मिलते हैं तब–तब उनका प्रेम बरसता है तथा प्रिय का रूप अनुपम लगता है:**

"रावरे रूप की रीति अनूप,
नयो नयो लागत  निहारिये।"[8]

**धनानंद प्रेम के संबंध में अति सीधे–सादे हैं, वो सांसारिक चातुर्य से अनभिज्ञ हैं और उसे प्रेम में बाधास्वरूप मानते हैं:**

"धनआनंद अनोखो यह प्रेम पंथ,
भूले ते चलित, रहें सुधि के थकित हवै।"[9]

प्रेम के प्रति समर्पण की अबोधता विलक्षण है।
धनानंद विरह के कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल इनके संदर्भ में लिखते हैं—

"इन्होंने संयोग और वियोग दोनों पक्षों को लिया है, पर वियोग की अंतर्दशाओं की ओर इनकी दृष्टि अधिक है। इसी से इनके वियोग संबंधी पद ही प्रसिद्ध हैं।"[10]

संयोग से सुख की पूर्णता ही वियोग को प्रभावशाली बनाती है। इनका वियोग इसलिए प्रभावशाली है क्योंकि इनकी विरहानुभूति वास्तविक और लौकिक है। इनकी विरह की वेदना में इतना बल है कि मृत्यु भी वियोगी के सामने आकर हार जाती है या मर जाती है!

"बनी है कवि महा, मोहि घनानंद यौं,
मीचो मार गई आसरो न जित टूडियो।।"[11]

तो दूसरी ओर वियोगी के मन और आँखों में भरी हुई अभिलाषाओं के संकेत बार–बार नजर आते हैं:

"अभिलाषनि लाखनि भांति भरे,
हिये साँस सुहावति न।"[12]

धनानंद के जीवन वृत्त को देखकर यह स्पष्ट हो जाता है कि सुजान के व्यवहार से इनके हृदय को बड़ी ठेस पहुँची और यह ठेस इनकी जीवन–दशा बदल देती है। वियोग के कारणों और रूपों की विवेचना करते हुए डॉ. रामचंद्र तिवारी कहते हैं—

"इन सभी वियोगों में सबसे अधिक विश्वासघात–जनित वियोग होता है। धनानंद का वियोग इसी कोटि का है। इसने इनके जीवन की दिशा ही बदल दी। वे श्रृंगारी से भक्त हो गये।"[13]

सुजान से मिला अपकार और उसके बाद भी उसके प्रति इनका प्रेम तथा इसके व्यक्तिगत प्रेम का राधा–कृष्ण की मूर्ति में विल्प (विलय), ये सब मिलकर इनके काव्य को विलक्षणता प्रदान करते हैं। उन्होंने अपने प्रेम को राधा–कृष्ण की भक्ति भावना से अलग रख लिया था, इसलिए इनका प्रेम पूर्ण राग–संयम साधना के साथ प्रकाशित हुआ, जिसमें प्रगाढ़ एकनिष्ठ भाव विद्यमान था।
धनानंद के प्रेम को प्रायः अनुपम/विषम प्रेम भी कहा गया है। विरह के छंदों में प्रेमी की दुर्दशा और प्रिय की निष्ठुरता/निदुराई के संबंध में नाटक को इस बात की चिंता है कि लोग मेरे प्रिय को निष्ठुर कहेंगे—

"पै तुम्हें भति कोउ कहाँ हितहीन,
या दुख अमीच मरौं।"[14]

तो आगे वियोग के कुछ पक्ष ऐसी अनुभूति की व्यंजना करते हैं कि प्रेमी के समक्ष समाज की विषम स्थिति की व्यंजना स्पष्ट परिलक्षित होती है। प्रेमी और प्रेमिका के बीच परिस्थितिजन्य विषमता बहुतायत में रहती है। प्रिय महफिल की भीड़ में रहता है, वह तन्हाई की वेदना कहा जाने? वह लिखते हैं:

कान्ह परे अकलौनि की बेदनि जानो कहा तुम,
मन मोहन मोहे कहूँ न वियोग विमनौवि की मानो।"[15]

**वियोग का एक और पक्ष (व्यथा–वर्णन) भी है, जिसका मार्मिक वर्णन करते हुए कवि लिखते हैं:**

"बदरा बरसै रितु में घिरि कै,
नित ही अंखियां उघरी बरसें।"[16]

वियोग दशा में परस्पर विरोधी भाव मन में उठते हैं, अतः वियोगी का जीवन विलक्षण बन जाता है। कवि ने इस वियोगी की स्थिति पर अनेक पद लिखे हैं। कवि की "विरोधी अभिव्यंजना का स्वरूप" ऐसे ही स्थलों पर दृष्टव्य होता है:

"अंतर उदंग दाह, आँखिन प्रवाह आँसू,
देखी अटपटी चाह भी जानि दहीन है।"[17]

इनके पद में पद–पद पर विरोध की विषमता व्यक्त हुई है। संयोग और वियोग दोनों दशाओं के अंतर्गत मन की छोटी–छोटी अंतर्दशाओं का बड़ा ही सजीव वर्णन किया है। धनानंद के काव्य में अभिलाषा, तमसा, उलझन, रास, व्यामोह आदि अंतर्दशाएँ विशेष रूप में वर्णित हैं। 'रीझ' इनके काव्य का प्रिय तत्व है। धनानंद की प्रिया का असाधारण रूप–सौंदर्य ही है, जिसका अभाव उनके विरह को इतना तीव्र और आवेगमय बना देता है।
इस संबंध में डॉ. भगीरथ मिश्र कहते हैं—

"धनानंद के रूप और भाव का चित्रण बिल्कुल रीतिकाव्य की पद्धति पर किया गया है, जो बड़ा ही मार्मिक है।"[18]

धनानंद के काव्य में ब्रजभाषा का जो परिनिष्ठित और अत्यंत विकसित रूप प्रयुक्त हुआ है, उसकी विशेषता बताते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल लिखते हैं—

"इनकी सी विशुद्ध, सरस और शक्तिशाली ब्रजभाषा लिखने में और कोई कवि समर्थ नहीं हुआ।"[19]

**उनकी ब्रजभाषा के पद देखते ही बनते हैं:**

"मोह की बात तिहारी असूझ,
मोह हिम की तो अमोहियो मौहौ।"[20]

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि धनानंद ने अपनी गम्भीर प्रेम–व्यंजना के सामने भाषा की क्षमता को छोटा कर दिया। धनानंद के वियोग वर्णन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें निराशा के लिए कोई जगह नहीं है। यह पूरी तरह आशाान्वित है। इन्हें अपने अंतर्मन की पुकार पर भरोसा है कि कभी तो यह प्रियतम तक पहुँचेगी:

"दिए रहोगे कहाँ लौ बहराइवै की,
कवहूँ तो मेरी ये पुकार कान खोलि है।"[21]

इनका संयोग व विरह वर्णन इनके स्वयं के घनीभूत विरहानुभूति का स्फोट है। वस्तुतः धनानंद की प्रेम व्यंजना सौहार्द, विश्वास, सार्थकता, गम्भीरता, निर्भीकता, हार्दिकता, वास्तविकता, दृढ़ता, अभिलाषा, एकनिष्ठता तथा उपालम्भ आदि विशिष्ट तत्वों से होकर निकली है। इसलिए धनानंद का संपूर्ण रचनात्मक मार्ग प्रेम का आंतरिक एवं निजी जीवन का भाव है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल कहते हैं—

"प्रेम मार्ग का ऐसा प्रवीण और धीर पथिक... कोई दूसरा कवि न हुआ।"

धनानंद की प्रेम–व्यंजना में प्रकट रूप मिलने का कारण है कि धनानंद ने कविता नहीं बनाई, उनकी कविता के विरह–प्रेम कलंक ने उन्हें बनाया था;

"लोग हैं लागि कवित्त बनावत,
मोहिं तो मेरे कवित्त बनावत।।"[22].

## निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि धनानंद रीतिमुक्त काव्य के ऐसे अद्वितीय कवि हैं, जिनका काव्य किसी बाह्य नियम या परिपाटी से न बनकर उनकी निजी घनीभूत विरहानुभूति से निर्मित हुआ है। उनका प्रेम लौकिक सीमाओं का अतिक्रमण कर लोकोत्तर एवं आध्यात्मिक ऊँचाइयों को छूता है। वियोग की तीव्र वेदना, अटपटी चाह, आशावादिता और परिनिष्ठित ब्रजभाषा का सजीव प्रयोग उनके काव्य को विशिष्ट बनाता है। धनानंद ने स्वयं कविता का निर्माण नहीं किया, बल्कि उनकी आत्मानुभूति और प्रेम की पीड़ा ने ही उनके काव्य का सृजन किया—"मोहिं तो मेरे कवित्त बनावत"। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में वे वास्तव में 'प्रेम मार्ग के प्रवीण और धीर पथिक' सिद्ध होते हैं।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची


1. **धनानंद ग्रन्थावली:** विश्वनाथ प्रसाद मिश्र (पृ. 10)
2. सुजान सागर धनानंद
3. **हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास:** रामस्वरूप चतुर्वेदी (पृ. 74)
4. **'रीतिकालीन कवियों की प्रेमव्यंजना'':** बच्चन सिंह (पृ. 240)
5. **धनानंद का श्रृंगार काव्य :** रामदेव शुक्ल (पृ. 22)
6. वही (पृ. 42)
7. **धनानंद (सुजान हित):** विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्रसाद परिषद, बनारस (पृ. 62)
8. **उत्तर मध्य कालीन काव्य:** हरीश अरोड़ा (पृ. 7)
9. **धनानंद का श्रृंगार काव्य:** रामदेव शुक्ल (पृ. 76)
10. **हिन्दी साहित्य का इतिहास:** रामचंद्र शुक्ल (पृ. 233)
11. **धनानंद का श्रृंगार काव्य:** रामदेव शुक्ल (पृ. 71)
12. **धनानंद का श्रृंगार काव्य:** रामदेव शुक्ल (पृ. 71)
13. **मध्ययुगीन काव्य साधना:** रामचंद्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, बनारस (पृ.48)
14. **धनानंद का श्रृंगार काव्य:** रामदेव शुक्ल (पृ. 62)
15. **हिन्दी साहित्य का इतिहास:** आचार्य रामचंद्र शुक्ल (पृ. 234)
16. **धनानंद का श्रृंगार काव्य'':** रामदेव शुक्ल (पृ. 94)
17. **धनानंद:** विश्वनाथ प्रसाद मिश्र (पृ. 63)
18. **हिन्दी रीतिकाव्य:** भागीरथ मिश्र (पृ. – 12)
19. **हिन्दी साहित्य का इतिहास:** रामचंद्र शुक्ल (पृ. 233)
20. **धनानंद का श्रृंगार काव्य'':** रामदेव शुक्ल (पृ. 25)
21. **धनानंद:** विश्वनाथ प्रसाद मिश्र (पृ. 13)
22. **हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास:** रामस्वरूप चतुर्वेदी (पृ. 72)